स्वामी रामप्रकाशाचार्य, जोधपुर कृत

शव-यात्रा

अन्त्येष्टि संस्कार दर्पण

ॐ

प्रकाशक : बम्बई वाले पं. श्रीधर शिवलालजी, किशनगढ़

श्री हरिगुरु सच्चिदानन्दाय नमः

शव यात्रा

अन्त्येष्टि संस्कार दर्पण

सनातन मार्गीय वैदिक साहित्य रीति से धर्मप्रेमी स्त्री,
पुरुष, बालक की रुग्णावस्था से
शव यात्रा अन्त्येष्टि संस्कार सहित अस्थि संचय की
शुद्धि-विधि।

लेखक—
[भारतीय समाज दर्शन, पिंगल रहस्यादि दर्जनाधिक्य
शास्त्र प्रणेता]
तत्वज्ञ स्वामी रामप्रकाशाचार्यजी महाराज "अच्युत"
धर्मवारिधि, आचार्य, कविभूषण, विद्या वाचस्पति, साहित्य
...ख्री, आयुर्वेदाचार्य, व्याकरण-शास्त्री, रामायणाचार्य,
पिङ्गलविशारद।
उत्तम आश्रम, कागामार्ग, जोधपुर- ३४२००१

बम्बई वाले-पंडित श्रीधर शिवलालजी
ज्ञानसागर छापाखाना, किशनगढ़ (राज०)

नं० ३७५६६०

संवत् २०४८ मूल्य 15

❀ दो शब्द ❀

मानव एक अपूर्व ज्ञाननिधि ऐश्वययुक्त ईश्वरीय सृष्टिके सर्वाङ्गीण कला-कौशल सौन्दर्ययुक्त सर्व समर्थ शक्ति केन्द्र का उपभागी एवं सर्वगुण साधक, देवत्व सिद्ध स्वार्जित अनुभव का तपस्वी मूल विज्ञ-तज्ञ है। जो अपने स्कन्ध पर रखे गये वैदिक-स्मृति न्यायशास्त्र का देव-ऋषिऋण और पितृऋण त्रयसे मुक्त होनेका प्रयत्न करता है। अपने पूर्वज-अग्रजोंके प्रति अर्थात् नरतनधारी नारायण मूर्तरूप सचेत्य शरीरको सम्माननीय दृष्टिसे परखकर चलता है और अन्तिमावस्था में ऐसे सामाजिक गठन सूत्र का भी स्वागत करके पार्थिव प्रयाण तक श्मशान भूमि के संसृति सागर संसार के उस घाट पर शव की अन्त्येष्टि करके अपनी कृतज्ञता से स्वनाम धन्य होता है।

ऐसे सनातन संस्कारित हिन्दु-समाज में स्वतंत्र रूप से शव संस्कार के संबंध में पुराणादि वृहत रचनाओं के अतिरिक्त एकाधिकार नयी पुस्तक के अभाव होने के कारण बहुधा हिन्दु परिवार के सदस्य संबधी माता-पिता, गुरु, अतिथि के पार्थिव को येन केन प्रकारेण श्मशान भूमि में वगैर विधि-क्रिया अन्त्येष्टि संस्कार करते हैं। यह देखकर पिछले चिर समय से आन्तरिक अभिलाषा ऐसी शाध में रही, किंतु ऐसी मन्त्रेष्टि शवदाह विधि बतलाने में सक्षमतायुक्त सनातन धर्म मार्गीय पुस्तक उपलब्ध नहीं होने पर पूर्ति में यथा साध्य संकलित-निधि से चयनित यह उपयुक्त लघु पुस्तिका प्रस्तुत की रचना हुई थी।

सृजित साहित्य को श्री महावीर प्रसाद शर्मा व्यवस्थापक ज्ञानसागर प्रेस किशनगढ़ ने आश्वासित कार्य सम्पन्न करके लेखक के श्रम श्रेय को सफलता देने के साथ ही हिन्दू-धर्म के आस्तिक सनातन मार्गीय समाज के लिये एक अन्तिम-संस्कार-विधि दर्शन की पूर्ति करने में सहयोग दिया है। अतः ऐसे परमार्थ साधक पुरुष को सादर आभारयुक्त धन्यवाद के साथ प्रस्तुत पुस्तिका का पुनर्मुद्रणादि सर्वाधिकार भी उन्हें ही अर्पित करता हूं। भवन्निष्ठ—

वि० संत रामप्रकाशाचार्य "अच्युत"

* श्रीहरिगुरू सच्चिदानन्दाय नमः *

अन्त्येष्टि संस्कार दर्पण ।
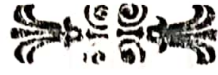
मंगलं भगवान विष्णु मंगलं गरुड़ध्वज ।
मंगलं पुण्डरीकाक्षौ मंगलायतनो हरिः ॥ १ ॥

मंगलं लेखकानां च पाठकानां च मंगलम् ।
मंगलं सर्व लोकानां भूयो भूयोस्तु च मंगलम् ॥२॥

मंगल मय मंगल करो, हरो ताप दुःख द्वंद ।
मंगल वरद रु अभयप्रद, मंगल कर आनन्द ॥३॥

जीवन मंगलमय सदा, मरणी मंगल होय ।
मंगल वर मंगल करो, अमंगल सब खोय ॥४॥

हिन्दु शव संस्कार में, उत्तम दर्शन होय ।
दर्पण उत्तम पुस्तिका, राम प्रकाश कह जोय ॥५॥

उत्तमराम गुरुदेव को, उत्तम वंदन संत ।
उत्तम हरि हर ब्रह्म को, रामप्रकाश अनंत ॥६॥

हरण करे दुःख द्वंद को, शरण मिले साकेतु ।
वरण होय संस्कार में, तरण होय भव सेतु ॥७॥

प्रथम सर्गः ।

रुग्णावस्था की विधि व्यवस्था ।

गृहादर्था निवर्तंते श्मशानात्सर्व बांधवाः ।
शुभाशुभं कृतं कर्म गच्छंत मनु गच्छति ॥१॥
शरीर वह्निनादग्धं कृतं कर्म सह स्थितम् ।
पुण्यं वायदिवा पापं भुंक्ते सर्वत्र मानवः ॥२॥

भावार्थ—मृतक होने पर प्राणी को धन घर से ही त्याग देता है, बांधव श्मशान तक पहुंचाते हैं और अपने द्वारा किये गये शुभ-अशुभ (पुण्य-पाप) कर्म साथ जाते हैं। शरीर तो अग्नि में भस्म हो जाता है, कर्म ही जीवात्मा के साथ रहते हैं, पुण्यों पापों का फल मनुष्य सर्वत्र भोगता है।

शृणुताद्यं प्रवक्ष्यामि देह त्यागस्यत द्विधिम् ।
मृतायेन विधाने न सद्गतिं यातिं मानवाः ॥३॥
कर्मयोगाद्यदा देही मुचत्यत्र निजं वपुः ।
तुलसी सन्निधौ कुर्यान्मंडलं गोमयेत् ।४॥

भावार्थ— शरीर त्याग की विधि कहते हैं, जिससे मृतक पुरुष सद्गति पाते हैं । शरीरी जब शरीर छोड़ने

लगे तब उस (रोगी) के लिये पहले तुलसी वृक्ष (पौधे) के पास पृथ्वी पर गोबर से लीपे ।

तिलाश्चैव विकीर्याथ दर्भाश्चैव विनिक्षिपेत् ।
स्थापयेदासने शुभ्रे शालिग्राम शिला तदा ॥५॥
शालिग्राम शिला यत्र पाप दोष भयापहा ।
तत्सन्निधान मरणान्मुक्तिर्जन्तोः सुनिश्चता ॥६॥

भावार्थ—रोगी के सेवक सावधान घरवालों को चाहिये कि उस पृथ्वी पर तिल, कुशा (दर्भ) बिखेरे, तब वहां छोटा सा पवित्र उज्ज्वल (सूती या ऊनी) आसन बिछाकर श्री शालिग्राम की मूर्ति स्थापन करे। जिस स्थान पर पाप-भय नाशिका शालिग्राम की मूर्ति स्थापित हो, वहां मृत्यु होने वाले को निश्चय शुभलोक (मुक्ति) मिलता है ।

तुलसी विटपच्छाया यैयजारित भवतापहा ।
तत्रैव मरणान्मुक्तिः सर्वदा दान दुर्लभाः ॥ ७ ॥
तुलसी विपट स्थानं गृहे यस्यावतिष्ठते ।
तद्गृहं तीर्थ रूपं हि नयांति यम किंकराः ॥८॥

भावार्थ—तुलसी मंजरी की छाया हो वहां मृत्यु होने से सर्वदा दान दूर्लभ गति होती है। जिस घर में तुलसी विरवा (पौध) हो, वह घर पवित्र तीर्थ तुल्य दर्शनीय है, वहां पर रोग-कीटाणु (यम दूत) कभी नहीं जाते हैं ।

तुलसी मंजरी युक्तोयस्तु प्राणान्विमुंचति।
यमस्तंनेक्षितुं शक्तोयुक्तं पापशतैरपि ॥ ९ ॥
तस्यादलं मुखे कृत्वा तिल दर्भासिनेमृतः।
नरो विष्णुपुरं याति पुत्र हीनोप्य संशय ॥१०॥

भावार्थ—जो पुरुष-प्राणी तुलसी मंजरी से युक्त प्राण छोड़ता है, वह तामसिक प्रवृतिके पापसे रहित होकर सद्‌गति पाता है। गंगाजल, दही युक्त तुलसीदल मुख में रखकर तिल एवं कुशाग्रों (दर्भ) के आसनपर जो प्राण छोड़ता है, वह यदि निपुत्र भी हो तो भी श्री युक्तलोक (विष्णु धाम) में जाता है।

तिलाः पवित्रास्त्रिविधादर्भाश्च तुलसीरपि।
नरं निवारयंत्येते दुर्गति यांत मातुरम् ॥११॥
गोमयेनोपलिप्ते तु दर्भास्तरण संस्कृते।
भूतलेह्यातुर कुर्यादंतक्षिं विवर्जयेत् ॥ १२ ॥

भावार्थ—तीनों प्रकार के तिल (काले, पीले, सफेद) कुशा (दर्भ) तुलसी यह तीनों पवित्र हैं, नरक (कष्ट-रोग युक्त धन वासना) में जाने वाले की रक्षा करते हैं, इन्हो के कारण मृत पुरुष को सद्‌गति मिलती है। गोबर से लीपा हुई पृथ्वी पर दर्भ तिल बिछाकर उस पर मरणासन्न रोगी की शय्या छतके नीचे होनी चाहिये, खुले आकाशके नीचे नहीं

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च सर्वे देवाहुताशनः।
मण्डलोपरि तिष्ठन्ति तस्मात्कुर्वीत मण्डलम्॥१३

सर्वत्र वसुधा पूता लेपोयत्र न विद्यते।
यत्रलेपः कृतस्तत्र पुनः लेपे न शुद्धयति॥ १४॥

भावार्थ—गोबर से लीपे या गौमूत छिड़के मण्डल में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, अग्नि एवं सभी देवताओं का निवास होता है। अतः मृतासन्न प्राणीके आमने-सामने (आस-पास) शुद्ध-शांत वातावरण हो, पवित्र हरिनाम संकीर्तन, गायत्री, वेदमंत्र, गीता, रामायण श्लोकार्द्धालियां, देवस्तोत्र पाठ ध्वनि हो, आस पास में शुभ भावात्मक देव-भक्त, वीर,ज्ञानी महापुरुष महात्माओं के सात्विक चित्र लगे हुए हों। जिस पर मरणासन्न प्राणी की दृष्टि पड़ती रहे। इससे मरणासन्न की भाव श्रद्धाएं (सूक्ष्म कारण वासनाएं) सात्विक बनी रहे, जिससे पुनर्जन्म सुखमय शुभस्थान धर्मप्रियता दायक बन सकें जिस पृथ्वी पर जहां गोमय लेपन कभी नहीं हुआ हो, वह पृथ्वी शुद्ध है, किन्तु जहां एक बार भी लेपन हो गया हो तो वह पुनः लीपन करने से ही शुद्ध होती है।

राक्षसाश्च पिशाचाश्च भूताः प्रेता यमानुगाः।
अलिप्त देशे खटवाया मंतरिक्षे विशंति च॥१५॥

अतोग्नि होत्रं श्राद्धं च ब्रह्मभोज्यं सुरार्चनम् ।
मण्डले न विना भूम्यामातुरं नैव कारयेत् ॥१६॥

भावार्थ—राक्षस, भूत, प्रेत, पिशाच, यमदूतादि की अणु आत्माएं (त्रेतवादजन्य त्रितत्व की वासनिक रूप से) लेपन नहीं की गई अशुद्ध पृथ्वी, खाट एवं खुले आकाश वाले प्रदेश में तात्विक रूप से प्रवेश करते-घूमते रहते हैं, अतः इन स्थानोंमें मरणासन्न प्राणीका आसन नहीं रखना चाहिये अर्थात् सेवाधारी सम्बन्धी को यह सभी सावधानी रखनी चाहिये कि शास्त्रीय विधि से शुद्ध स्थान पर पवित्र सात्विक विचार वातावरण एवं गंगाजल-तुलसी दल कण्ठ-मुख में (तीर्थजल विशेष पूजन जल) लेते हुए प्राणी का प्राणोत्सर्ग हो । इसी कारण अग्नि होत्र, श्राद्ध, ब्रह्मभोज, देवपूजन, मृत्यु-शय्या आदि कर्म गोमयोपलिप्त मण्डल के बिना कभी नहीं करना चाहिये ।

लिप्त भूम्यामतः कृत्वास्वर्ण रत्नं मुखेक्षिपेत् ।
विष्णोपादोदकं दद्याच्छा शालिग्रामस्वरूपिणः ॥

अतो ध्यायेन्नमेद् गङ्गा सस्मरेतज्जलं पिवेत् ।
ततो भागवतं किञ्चिच्छृणुयान्मोक्षदायकम् ॥१८॥

भावार्थ—मरणधर्म पुरुष के लिये पृथ्वी पर लेपन

लगाकर तिल, दर्भादि, तुलसीजल छिड़काकर उसी मण्डल में ही सुलादे, फिर उसके मुख में स्वर्ण-पंचरत्न तुलसीदल, दही मिश्रित तीर्थजल डालें अथवा श्री शालिग्राम पूजन चरणामृत दही मिश्रित मिलावे। मरणासन्न प्राणी श्री गंगाजी प्रयागराज का ध्यान, स्मरण, नमस्कार, जलपान अवश्य करें और मोक्षगीत श्रीमद्भागवत, गीता, रामायण, गायत्री, वेद मन्त्र पाठ करे या सुने सुनावे, तो वह प्राणी मुक्तरूप शुभ लोकवासी होता है।

पुत्रः शोकं परित्यज्यं धृतिमास्थाय सात्विकीम्।
श्लोष्माश्रु बांधवैर्मुक्तं प्रेतोभुक्तेयतोऽवशः॥१८

भावार्थ—शोक को त्यागकर सात्विक धैर्य धारण करे, अर्थात् अश्रुपात न करे, रोने वाले बांधवों के आंखों का अश्रुजल, नाक का मल एवं श्लेष्म आदि घृणित चीजों को वह मृतकात्मा दुखद योनि पाकर भोगता है। यदि हजार वर्ष तक भी मृतक के लिये दिन रात शोक करता रहे फिर भी वह प्राणी पुनः लौटकर उस शरीर में नहीं आ सकता है। जो पैदा हुआ है, उसको मरना है और जो मरता है, उसे जन्म लेना पड़ता है, इस प्रकार के नहीं मिटने वाले अर्थ में बुद्धिमान शोक नहीं करते हैं।

रहिमन कैसे रोईये, हंसिये कौन विचार।
गये सो आवन के नहीं, रहे सो जावनहार॥१॥

शव-दाह-विधान।

१. गर्भ में मरे हुए की कोई दाह क्रिया नहीं होती है।

२. उत्पन्न होकर शिशु अवस्था में मर जाय तो उसके लिये शुद्ध होकर दूध दान करनेसे सूतक निवृति होतीहै। दांतों की उत्पति तक शिशु संज्ञा है, उसका दाह नहीं होता।

३. दांत आने से तीन वर्ष तक की बालकावस्था में मृत्यु होने से दाह नहीं होता, तथा शुद्ध होकर जलदान एवं बालकों को खीर भोजन गौशाला का जल तृण सेवा करने से सूतक दूर होता है।

४. तीन से ५ वर्ष तक की कुमार संज्ञाकी मृत्यु पर बालकों कुमारों को बुलाकर मिष्ठान्न भोजन कराने से सूतक मिटता है तथा दाह कर्म नहीं किया जाता।

५. पांच से दश वर्ष की आयु यौगण्डावस्था में जब तक यज्ञोपवीत, विवाह संस्कार हो जाने से पहले दाह नहीं होता और संस्कार के बाद में होने वाले मृतक का दाहकर्म होता है और उसके सूतक निवृति हेतु बालकों ब्राह्मण, संत भोजन, गोशाला में घास, जल डलवाने दीन अनाथों को भोजन, वस्त्र देने चाहिये। अव्रत या सव्रत पांच वर्ष से ऊपर वाले की मृत्यु हो जाय तो क्रमशः गुड़ के साथ बने हुए मालपुवे खीर का भोजन

बालकों को खिलाने तथा विविध उपाय करनेसे सूतक निवृति तथा आत्म-शान्ति होती है ।

६. पिता की जीवित अवस्था में बालक की योगण्डावस्था में मृत्यु हो जाय तो उसका श्राद्ध पिण्ड दान नहीं होता।

७. दश वर्ष से १५ वर्ष तक किशोर अवस्था तथा उसके बाद २० वर्ष तक युवा के बाद तरुणावस्था होती है, उसमें किसी की मृत्यु हो जाय तो सामाजिक न्यून विशेष मय स्त्री का एकादशाह, पुरुषका द्वादशाह करने से सूतक निवृति होती है ।

८. हिन्दू धर्म में आस्था रखने वाले सामाजिक बन्धुओंको चाहिये कि वे शास्त्रीय पद्धति से आर्य वैदिक सनातन अथवा जैन मत्यानुसार अपनी मनौति पूर्वक शव का दाह संस्कार ही करें । दश वर्ष के बाद की आयु वाले मृतकको अवश्य अग्नि संस्कार ही किया कराया जावे । घोर (पृथ्वी) में गाडने की यवन प्रभावी प्रथा का अंत किया जाये, जैसे कि आजकल पिछड़े हिन्दू वर्गीय आज तक अज्ञानता के गर्त में डूब रहे हैं, जिन्हें आर्य सनातनी बुद्धिजीवि धनी मानी महाशय भी समझाने की चेष्टामय बल नहीं देते हैं ।

९. मृतक के नाम मृत्युभोज, मोसर, औसर, गंगभोज,

गंगोड़ादि सभी रूढ़ि अज्ञान वृत प्रथाएँ हैं, जो आज सामयिक परिस्थितियों से सामाजिक अन्याय तथा कानूनी अपराध और भावी बाल पीढ़ी के लिये जघन्य जुर्म है । अतः इस चक्कर में कभी नहीं पड़ना चाहिये ।

१०. मृतक प्राणीके बिछोह में सम्बधी, पुत्र-बांधव अपनी आत्म शांति मात्र श्रद्धा से जो कुछ करे—गौदान, गौ-शाला में आर्थिक पालन सहयोग, साधु-संत, ब्राह्मण, कन्याएँ, बालकादि को धर्म नीति की दृष्टि से भोजन दान द्वारा सन्तोष प्राप्त कर सकता है । परन्तु ऐसा कोई सामाजिक या शास्त्रीय प्रतिबन्ध नहीं है ।

११. शास्त्र-स्मृतिकार केवल उन्हें आज्ञा देते हैं जो सम्पन्न प्रभुत्व हो, तीन वर्ष की अवधि का परिवार में बगैर कमाये सभी सदस्यों को भरण-पोषण होने की स्थिति के उपरांत यदि उसके पास खर्च करने की सम्पति है, तो भी वह किसी को नीचा दिखाने या अपने गर्व से तामसिक, राजसिक प्रवृतियों रहित केवल सात्विक श्रद्धा शक्ति भाव रूप पुण्य दान स्मृति हेतु गौशाला, औषधालय, अनाथालय, धर्मशाला, मन्दिर, प्याऊ आदि सुपात्र स्थानों में खर्च कर सकता है ।

१२. मृतक के नाम पर जो कुछ किया जाता है, उस पुण्यको शास्त्रकारों ने चार भागों में आवंटन वितरित किया

है-(१) आत्म शान्ति का दैन्य, (२) मृतक संस्कार पूर्ति जन्य, (३) प्राकृतिक देव भाग, (४) मृतक के साथ लगी गुप्त ईश्वरीय तात्विक रूप अदृष्ट शक्तियों के लिये।

१३. ऋण लाकर, उधार मांगकर, किसी के साझे-सहयोग अर्थ से किये गये सभी पुण्य कर्म, दान, तीर्थ-यात्रा, भोजादि का अर्द्धांश धर्मभाग दाता के हिस्सा पूंजी में चला जाता है। अतः ऐसा काम कभी नहीं करना चाहिये जिसमें धर्म भाग के साथ ब्याज सहित ऋण मूल धन भी देना पड़े।

१४. यह विधान जो घर में रोगी होकर शय्या पर मृत्यु पाने वाले के लिये कहा गया है, किन्तु आकस्मिक घटना से सामयिकता पूर्वक हुए प्राणांत शव को केवल अर्थात् सभी प्रकार से मृतक शव के लिये, द्वितीय सर्ग में कहा विधान लागू है।

१५. साधु संयासियों, विरक्तावस्था के महापुरुषों की मृत्यु होने पर उनका शव दाह, जलतर्पण, दशगात्र आदि कोई क्रिया कर्म उनका पुत्र सम्बन्धी नहीं करे अर्थात् उनका संस्कार कर्म उनके शिष्य भाव को धारण करने वालों द्वारा होता है सतरहवीं कर्म (सूक्ष्म देह सत्रह तत्व विसर्जन रूप) कथा, कीर्तन, वैदिक हवन, पाठ-स्तोत्र मात्र करने से आत्म शांति हो जाती है,

उनके लिये कोई विधान कर्म की वैधानिकता नहीं है। क्योंकि आतुर सन्यास, विधि सन्यास, दीक्षा संस्कार मात्र से वह प्राणी नर से नारायण "अहं ब्रह्मास्मि" रूप अपरोक्षानुभूति से त्रिदण्डधारी भवधारा को तर कर सदा मुक्तरूप हो जाता है।

१६. साधु सन्यासी, विरक्त की शास्त्रमत से कोई और्ध्व-देहिक क्रिया का विधान नहीं है, परन्तु यदि कोई पुत्र, सम्बन्धी अपनी भक्ति से गया आदि तीर्थ-तर्पण करे तो यह उनकी प्रसन्नता है।

१७. हंस, परमहंस, कुटिचक, बहुदक इन चारों प्रकार के वैष्णव, विरक्त सन्यासियों की मृत्यु पर इनके शरीर को पृथ्वी में समाधि (गाडे) या दाह संस्कार करे अथवा गंगादि धारा वाहित नदी प्रवाह में प्रवाहित करे। यदि वे चाहें तो पर्वतादि एकान्त स्थान पर निर्जन वन में जाकर नग्नावस्था में पवन दाह करके रखदे, जिसे वन्य जन्तु भक्षण कर लेंगे।

हंसा वा दिशि जाईये, जहाँ अपनो नहिं कोय।
सूआ भखे जिनावरां, सहजे मोसर होय ॥ २ ॥

सात गाँठ कोपीन के, लकड़ी में त्रिय बङ्क।
राम अमल माता फिरे, गिने इन्द्र को रङ्क ॥ ३ ॥

द्वितीय सर्गः ॥

(मृतक का शव घर से श्मशान घाट तक)

अर्थी प्रयाण विधि।

यत्कृत्वा पुत्र पौत्राश्च मुच्यंते पैतृकाद्दणात्।
किं दत्तै बहुभिर्दानैः पित्रोरन्त्येष्टि माचरेत् ॥ १ ॥
तदा शोकं परित्यज्य कारयेन्मुण्डनं सुतः।
समस्त बाँधवैर्युक्तः सर्व पापनुत्तये ॥ २ ॥

भावार्थ—जिनके द्वारा पुत्र, पौत्रादि सम्बन्धीगण पैतृक ऋण से मुक्ति पाये, वह शुभ कर्म मृतक माता-पिता, अतिथि आचार्य, वृद्धेतर सम्बन्धी का अन्त्येष्टि संस्कार है। जो शव-दाह संस्कार में सम्मिलित होता है, वह अग्निष्ठोम (यज्ञ) का पुण्य फल पाता है। जब माता पिता सम्बन्धी की मृत्यु हो जाय, तब पुत्र, सन्निकट सम्बन्धी उसका शोक छोड़कर मुण्डन करावे।

माता पितरोर्मृतौ येन कारितं मुण्डन नहिः।
आत्मजः सकथं ज्ञैयः संसारार्णवतारकः ॥ ३ ॥
अतो मुण्डनमावश्यं नख कुक्षि विवर्जितम्।

ततः सतांधवः स्नात्वाधौत वस्त्राणि धारस्यत ॥४॥

भावार्थ—जिसने माता-पिता, सम्बन्धी की मृत्यु पर मुण्डन नहीं कराया, वह संसार-समुद्र से तारने वाला नहीं है। नाखून तथा छाती के बाल न कटवावे और दाढ़ी, मूंछ, सिर के बाल अवश्य मुण्डन करवाकर बांधवों के साथ स्नान कर धुले वस्त्र धारण करे।

सद्योजलं समानीयत तस्तंस्नापयेच्छवम् ।
मडयेच्चन्दनैः स्त्रिग्भिर्गंगा मृत्तिकयाथवा ॥५॥

भावार्थ—कुआ, नदी आदिसे ताजा जल लाकर अथवा घर में ही उष्णोदक तैयार करके तैल मुलतानी खरिया मट्टी (मेट) से पार्थिव शरीर को यदि पुरुष हो तो पुरुष समूह द्वारा और स्त्री हो तो स्त्रियों द्वारा स्नान करवावे। चन्दनादि सुगन्ध लेपन करके पार्थिव शरीर को नवीन वस्त्र पहनावे, पुष्पों की माला पहनावे और गङ्गा की मट्टी या गोपीचंदन, केशर का तिलक मस्तक (ललाट) पर लगावे।

अर्थी (सीढी) या वैकुण्ठी जैसी उपयुक्त आचार व्यवस्था हो वह तैयार करे और नये वस्त्रों से (पेटिका, रथी, वैकुण्ठी को) आच्छादत करे। कुशा पवित्री धारण करके मृतक को दक्षिणा के साथ संकल्प पिण्डदान करे। गेहूं, जौ बाजरा, मक्का सुविधानुसार जो मिले उसका न्यूनतम एक

किलो आटा लेकर गूंदलें और उसके १००-१०० ग्राम के लड्डू बनालें, जो रथी के साथ ले चलें, कुछ मिष्ठान्न भी साथ लें। वो क्रमशः रास्ते में अर्थी के साथ समय २ पर चार जगह पिण्डदान डालने के लिये होते हैं।

शव-अर्थी-यात्रा-विधि ।

दाह संस्कार की तैयारी के लिये एक पवित्र जल से भरा पीतल का बरतन (लोटा तथा बाल्टी, कलशादि सुविधानुसार) हो, शव अन्त्येष्टि के लिये घृत, चन्दन चूरा कस्तूरी, केसर, अगर, तगर, तिल, जौ, नारियल-चूरा या साबित, हवन सामग्री. सूखे नींबू, कपूर, पलास, पीपल या चन्दन का ईन्धन यह सभी सामग्री इकट्ठी करके अधिक से अधिक जितनी शक्ति सामर्थ्य सुविधानुसार जुटा सके, उतनी शव के साथ श्मशान भूमि में पहुंचादें या शवयात्रा के साथ ले चलें। अग्नि अर्ध प्रदीप्त मट्टी की हंडिया में लें लेम्प (घी की मशाल तथा साथमें घी की व्यवस्था का बर्तन) एक घी का दीपक (जो रास्ते में यदि बुझ जाय तो उससे मशाल प्रदीप्त करने के लिये) हो। घर से श्मशान तक शव यात्रा के साथ संकीर्तन (संगीत के साज बाज) उत्सव के साथ मङ्गल ध्वनि वेद ध्वनि, शङ्खध्वनि, जय ध्वनि का रूपक समा बन्धा रहे।

ततः प्रदक्षिणां कृत्वा पूजनीयः स्नुषादिभिः ।
स्कन्धः पुत्रेण दातव्यस्त दान्यै बाँधवैः सह ॥६॥
धृत्वा स्कन्धे स्वपितरंयः श्मशानाय गच्छति ।
सोऽश्वमेध फल पुत्रो लभते च पदे पदे ॥ ७ ॥

भावार्थः-भवन में अन्तिम दर्शन के लिये (वृद्ध, माता पिता, अतिथि, आचार्य, साधु)शव अर्थी की परिक्रमा करे, नारियल से पूजन करे, फिर पुत्र शिष्य सम्बन्धी सन्निकट द्वारा अर्थी को प्रथम उठावे, कन्धा देकर उठाके चले और भवन द्वार पर प्रथम पिण्डदान किया जाय । जो पुत्र (लघु सम्बन्धी) अपने वृद्ध प्रवर की अर्थी को कन्धा देकर श्मशान ले जाता है, वह एक एक कदम में अश्वमेध यज्ञ का फल पाता है । क्योंकि जिन्होंने अपने साथ रहकर बाल केलि मैत्रय उपदेश हित साधन क्रिया लालन पालन किया, अब उसी ऋण की निवृति के लिये कृतज्ञता पूर्ण ऐसा उचित है । जब अर्थी वाहक शव-रथी लेकर चल रहे हों तो उस समय सन्निकट समवय न्यून आयु वालों को नंगे पांव नमन दण्डवत् करते, पुष्प गुलाल वर्षाते हरिकीर्तन उत्सव सहित पथ प्रयाण करें ।

ततोर्ध मार्गे विश्रामं संमार्ज्याभ्युक्ष्य कारयेत ।
सस्नाप्यभूत संज्ञाय तस्मै तेन प्रदापयेत् ॥ ८ ॥

ततोनीत्वाश्मशानेषु स्थापयेदुत्तरामुखम् ।
तत्रदेहस्य दाहार्थं स्थलं संशोधयेद्यथा ॥ ९ ॥

भावार्थ—श्मशान के आधे मार्ग में पृथ्वी को झाड़ कर फिर उस पर जल छिड़क कर उसके ऊपर शव को रखें तथा स्कन्धधारी वाहकों के विश्राम तथा पार्थिव का व्यवहारिक सम्बन्ध विच्छेद दर्शक कफन के कोने की चींधी कपड़ा तोड़कर वहां किसी पेड़ पर डाली जाती हैं। वहां से पुनः शव को उठाकर इष्ट पुण्याहवाचन संस्कार ध्वनि से चलते २ श्मशान में लेजाकर उत्तर की तरफ मुख (सिर) करके उपयुक्त स्थान पर रख* दें और दाह सामग्री व्यवस्था की शोधन-माजन तैयारी करे तथा अन्तिम चौथा पिण्डान्न वहां पर चारों दिशाओं में डाल दिया जाय।

विशेष—पिण्डान्न घर से लेकर श्मशान तक चार जगह पर डाले जाते हैं, जिसके सम्बन्ध में ऐसा विश्वास कथन है कि—

स्थान	मृतक देह नाम	फल
(१) भवन	प्रेत	मरणशील प्राणी की वासना तृप्ति।

* शव का शिर उत्तर, ईशान या वायव्य कोण में रहे और शव के पांव दक्षिण, नैऋत्य अथवा आग्नेय कोण में रहने चाहिये।

(२) द्वार पर	पान्थ	अपगतिसे गये प्रेत पितृ-रादि से दुर्गति जीवों की तृप्ति हेतु भौतिक प्राणियों को दिये जाते है ।
(३) आधे मार्ग पर	भूत	पिशाच, राक्षस, यक्ष दिशाओं में विचरते तात्विक प्राणों की तृप्ति हेतु ।
(४) श्मशान विश्रान्ति	सर्वभू	सर्वभूमि देवोंकी प्रसन्नता

पञ्चक विचार ।

ज्योतिष विचार में अश्विनी से २३वें नक्षत्र धनिष्ठा से रेवती तक प्रतिमाह पांच पंचक दिवस कहे जाते हैं। यदि उन दिनों किसी की मृत्यु होजाय तो मृतक शव का दाह-कर्म विधिपूर्वक करना चाहिये अन्यथा घरमें विविध उपद्रव विघ्न बाधाऐं हो जाती हैं। दाह-क्रिया से पहले चार अर्थात् उस दिन के सिवाय बकाया जितने दिन पंचकों के हों उतने दर्भों के पुतले बनाकर मृतक के पास रखे, उन्हें नक्षत्र मन्त्रों से अभिमन्त्रित करे और उन दर्भ पुतलों की शव के साथ क्रिया करे तो पंचक के समस्त दोषों की शान्ति का विधान पूरा हो।

पंचकों में हुई मृत्यु पर विविध जप, तप, दान द्वारा दोषों की शान्ति होती है।

तृतीय सर्गः ॥

दाह संस्कार ।

संमार्ज्य भूमिं संलिप्योल्लिख्योद्धृत्य च वेदिकाम् ।
अभ्युक्ष्योप समाधाय वन्हि यत्र विधानतः ॥ १ ॥
पुष्पोक्षतै रथाभ्यर्च्य देवं क्रव्याद संज्ञकम् ।
लोयभ्यस्त्वनुवाकेन होमं कुर्याद्यथा विधिम् ॥२॥

भावार्थ—प्रथम भूमि झाड़ कर जल छिड़ककर उसे गोबर से लीपे या कुंकुम-गुलाल से सींचे फिर कुशाओं से रेखा करें अर्थात् ॐ या राम, स्वस्तिक आदि ईश्वर नाम लिखें । उस रेखाके मध्यसे अनामिका एवं अंगुष्ठसे मृत्तिका उठाकर उत्तर पूर्व के बीच ईशान कोण में फेंकना फिर जल छिड़ककर वेदिका सिद्ध करनी अर्थात् उस पर विधिपूर्वक जीव जंतु विहीन बड़ी गांठदार लकड़ियां भार पीपल, चंदन तुलसी, पलाशादि का चुनाव करे उस पर शव को स्थापन करे । शवके घुटनों एवं मस्तिष्क अर्थात् कठोर हड्डी स्थानों पर बड़ा भार आदि रखकर सुव्यवस्थित रूपसे चिने । अर्थी के वस्त्र दुशाले सभी उतार कर दूर रखवादे, केवल उपवस्त्र लंगोटी (कच्छा) मात्र शम-रक्षित रखकर अन्य उतारलें ।

चारों ओर से काष्ठ-चन्दन पलाश आदि बराबर चिन दें।

जब तक यह क्रिया तैयार होवे तब तक लम्बी २ लकड़ियों में चार चमसों को चाहे वे लकड़ी के हों वा चांदी, सोना या लोहेके हों, उसे खूब दृढ़ बन्धनों से डण्डों के साथ बांधें। पश्चात् क्रव्याद संज्ञक उस अग्नि की पुष्प अक्षतादि से पूजा करके घृतका दीपक करे, कपूरमें लगाकर सिर की तरफसे आरम्भ करके पांव पर्यन्त बीच २ अग्नि प्रवेश करावे उसके बाद घृत की पांच आहुतियां देवे—

ॐ अग्नये स्वाहा । ॐ सामाय स्वाहा ।
ॐ लोकाय स्वाहा । ॐ अनुमतये स्वाहा ।
ॐ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा ॥

जब तक अग्नि प्रदीप्त होवे तब तक अग्नि की प्रार्थना करे

त्वं भूत भृजगद्योनिस्त्वं भूत परिपालकः ।
मृत सांसारिक स्तस्मादेनं त्व व स्वर्गतिनय ॥३
अस्मात्वमधि जातोसि त्वदयं जायतां पुनः ।
असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा ज्वलतु पावकः ॥४

भावार्थ—हे अग्निदेव ! आप पंचभूतात्मक शरीरों के धारण करते हो, जगतके कारण हो तथा पालक भी हो, इस मृत्युगामी प्राणी के पार्थिव को गतिमें पहुंचाइये। हे अग्ने

आप वासुदेव से उत्पन्न हो, इस कारण यह आपके द्वारा ही स्वर्गलोक को प्राप्त हो, यह पार्थिव आप में स्वाहा हो।

अग्नि प्रदीप्त होने के पश्चात् चार मनुष्य अलग २ से खड़े रहकर वेदों के मन्त्रों से आहुति देते जायें, जहां मंत्र की पूर्ति में "स्वाहा" शब्द आवे वहां सामग्री को चमसों द्वारा आहुति छोड़ते जायें।

वेद मन्त्राः ।

सूर्यं चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा। अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः स्वाहा ॥ १ ॥

अजो भागस्तपसा तं तपस्व तं ते शोचिस्तपतु तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्ताभिर्वहैनं सुकृतामु लोकं स्वाहा ॥ २ ॥

अवसृज पुनरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुतश्चरति स्वधाभिः। आयुर्वसान उपवेतु शेषः संगच्छतां तन्वा जातवेदः स्वाहा ॥ ३ ॥

अग्नेर्वर्म परिगोभिर्व्ययस्व संप्रोर्णुष्व पीवसा मेदसा

च । नेत्त्रा घृष्णुर्हरसाजहृ षाणो दघृग्विधक्ष्यन्पर्य-ङ्खयाते स्वाहा ॥ ४ ॥

यं त्वमग्ने समदहस्तमु निर्वापया पुनः ।
कियाम्ब्वत्र रोहतु पाकदूर्वा व्यल्कशा स्वाहा ॥५॥

परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनु परप-शानम् । वैवस्वतं सङ्गमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य स्वाहा ॥ ६ ॥

यमो नो गातुं प्रथमोविवेद नैषा गव्यूतिरपभर्त्त-वाउ । यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्य३ अनुस्वाः स्वाहा ॥ ७ ॥

मातलोकव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्वभिर्वा-वृधानः । यांश्चदेवा वावृधुर्ये च देवान्त्स्वाहान्ये स्वधयान्ये मदंति स्वाहा ॥ ८ ॥

इमं यम प्रस्तरमा हिसीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संवि-दानः । आ त्वा मंत्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राज-न्हविषा मादयस्व स्वाहा ॥ ९ ॥

अङ्गिरोभिरागहि यज्ञियेभिर्यम वैरूपैरिह मादयस्व ।

विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्य स्वाहा ॥ १० ॥

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिर्यत्रा न पूर्वे पितरः परेयुः। उभा राजाना स्वधया मदंता यमं पश्यासि वरुणं च देवं स्वाहा ॥ ११ ॥

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टा पूर्तेन परमे व्योमन्। हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः स्वाहा ॥ १२ ॥

अपेत वीतवि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन्। अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्य वसानमस्मै स्वाहा ॥ १३ ॥

यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः। यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्नि दूतो अरङ्कृतः स्वाहा ॥१४॥

यमाय घृतवद्धविर्जुहोत प्र च तिष्ठत। स नो देवेष्वा यमद्दीर्घमायुः प्र जीवसे स्वाहा ॥१५॥

यमाय मधुमत्तमं राज्ञे हव्यं जुहोतन। इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्य स्वाहा ॥१६

कृष्णःश्वेतोऽरुषो यामो अस्य ब्रध्न ऋज्र,उतशोणो यशस्वान। हिरण्यरूपं जनिता जजान स्वाहा॥१७
प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः स्वाहा ॥ १८ ॥

पृथिव्यै स्वाहा १९ अग्नये स्वाहा २०
अन्तरिक्षाय स्वाहा २१ वायवे स्वाहा २२
दिवे स्वाहा २३ सूर्याय स्वाहा २४
दिग्भ्य स्वाहा २५ चन्द्राय स्वाहा २६
नक्षत्रेभ्य स्वाहा २७ अद्भ्य स्वाहा २८
वरुणाय स्वाहा २९ नाभ्यै स्वाहा ३०
पूताय स्वाहा ३१ वाचे स्वाहा ३२
प्राणाय स्वाहा ३३ प्राणाय स्वाहा ३४
चक्षुषे " ३५ चक्षुषे " ३६
श्रोत्राय " ३७ श्रोत्राय " ३८
लोमभ्य स्वाहा ३९ लोमभ्य " ४०
त्वचे " ४१ त्वचे " ४२
लोहिताय स्वाहा ४३ लोहिताय " ४४
मेदेभ्यः स्वाहा ४५ मेदेभ्यः स्वाहा ४६

माꣳसेभ्यः	स्वाहा	४७	माꣳसेभ्यः	स्वाहा	४८
स्नावभ्यः	,,	४९	स्नावभ्यः	,,	५०
अस्थभ्यः	,,	५१	अस्थभ्यः	,,	५२
मज्जभ्यः	,,	५३	मज्जभ्यः	,,	५४
रेतसे	,,	५५	पायवे	,,	५६
अयासाय	,,	५७	प्रायासाय	,,	५८
संयासाय	,,	५९	वियासाय	,,	६०
उद्यासाय	,,	६१	शुचे	,,	६२
शोचते	,,	६३	शोचमानाय	,,	६४
शोकाय	,,	६५	तपसे	,,	६६
तप्यते	,,	६७	तप्यमानाय	,,	६८
तप्ताय	,,	६९	धर्माय	,,	७०
निष्कृत्यै	,,	७१	प्रायश्चित्यै	,,	७२
भेषजाय	,,	७३	यमाय	,,	७४
अन्तकाय	,,	७५	मृत्यवे	,,	७६
ब्रह्मणे	,,	७७	ब्रह्महत्यायै	,,	७८

विश्वेभ्य देवेभ्य स्वाहा ॥ ७९ ॥

द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥ ८० ॥

सूर्यं चक्षुषा गच्छ वातमात्मनादिवं च गच्छ पृथिवीं च धर्मभिः । अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः स्वाहा ॥ १ ॥

सोम एकेभ्यः पवन घृतमेक उपासते ।
येभ्यो मधु प्रधावति तांश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा
ये चित्पूर्व ऋतसाता ऋतजाता ऋतावृधः ।
ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात् स्वाहा
तपसा ये अनाधृष्यास्तपसा ये स्वर्ययुः ।
तपो ये चक्रिरे महस्तांश्चि देवापि गच्छतात् स्वाहा
ये युध्ययन्ते प्रधनेषु शूरासो ये तनूत्यजः ।
ये वा सहस्र दक्षिणास्तांश्चि देवापि गच्छतात् स्वाहा
स्योनास्मै भव पृथिव्यनृक्षरा निवेशनी ।
यच्छास्मै शर्म सप्रथाः स्वाहा ॥ ६ ॥

अपेमं जीवा अरुधन् गृहेभ्यस्तन्निर्वहत परि ग्रामादितः मृत्युर्यमस्यासीद् दूतः प्रचेता असून पितृभ्यो गमयाचकार स्वाहा ॥ ७ ॥

यमः परोऽवरो विवस्वान् ततः परं नाति पश्यामि

किञ्चन । यमे अध्वरो अधिमे निविष्टो भुवो विव-
स्वानन्वाततान स्वाहा ॥ ८ ॥
अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वा सवर्णा मददुर्विव-
स्वते । उताश्विनावभरद् यत्तदासीदुजहादुद्वामिथुना
सरण्युः स्वाहा ॥ ९ ॥
इमौ युनज्मि ते वह्नी असुनीताय वोढवे ।
ताभ्यां यमस्य सादनं समितीश्चाव गच्छतात् स्वाहा
अग्नये रयिमते स्वाहा ॥ ११ ॥
पुरुषस्य सयावर्यपेदघानि मृज्महे ।
यथा नो अत्र नापरः पुरा जरस आयति स्वाहा ॥ १२
य एतस्य पथो गोप्तारस्तेभ्यः स्वाहा ॥ १३ ॥
य एतस्य पथो रक्षितारस्तेभ्यः स्वाहा ॥ १४ ॥
य एतस्य पथोऽभिरक्षितारस्तेभ्यः स्वाहा ॥१५॥
ख्यात्रे स्वाहा ॥१६॥ अपाख्यात्रे स्वाहा ॥१७॥
अभिलालपते स्वाहा १८ अपलालपते स्वाहा ॥१९
अग्नये कर्मकृते स्वाहा ॥ २० ॥
यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहा ॥ २१ ॥

अग्नये वैश्वानराय सुवर्गाय लोकाय स्वाहा ॥२२॥
आयातु देवः सुमनाभिरुतिभिर्यमो ह वेह प्रयता-
भिरक्ता । आसीदता ँ सुप्रयते ह बर्हिषूर्जाय जात्यै
मम शत्रुहत्यै स्वाहा ॥ २३ ॥
योऽस्य कौष्ठ्य जगतः पार्थिवस्यैक इद्वशी ।
यमं भङ्ग्यश्रवो गाय यो राजाऽनपरोध्यः स्वाहा ॥
यमं गाय भङ्ग्यश्रवो यो राजाऽनपरोध्यः ।
येनाऽऽपो नद्यो धन्वानि येन द्यौ पृथिवी दृढा स्वाहा
हिरण्यकक्ष्यान्त्सुधुरान् हिरण्याक्षानयः शफान् ।
अश्वाननश्शतो द न यमो राजाभितिष्ठति स्वाहा।
यमो दाधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगत् ।
यमाय सर्वमित्तस्थे यत् प्राणद्वायुरक्षितं स्वाहा २७
यथा पञ्च तथा षड् यथा पञ्चदशर्षयः ।
यमं यो विद्यात् स ब्रूयाद्यथैक ऋषिर्विजानते स्वाहा
त्रिकद्रुकेभिः पतति षडुर्वीरेकमिद् बृहत् ।
गायत्री त्रिष्टुप्छन्दा ँसि सर्वा ता यम आहिता
स्वाहा ॥ २९ ॥
अहरहर्नयमानो गामश्वं पुरुष जगत ।

वैवस्वतो न तृप्यति पञ्चभिर्मानवैर्यमः स्वाहा ॥३०
वैवस्वते विविच्यन्ते यमे राजनि ते जनाः।
ये चेह सत्येनेच्छन्ते य उ चानृतवादिनः स्वाहा ३१
ते राजन्निह विच्यिन्तेऽथा यन्ति त्वामुप।
देवांश्च ये नमस्यन्ति ब्राह्मणांश्चापचित्यति स्वाहा
यस्मिन्वृक्षे सु पलाशे देवैः संपिवते यमः।
अत्रा नो विश्पतिः पिता पुराणो अनुवेनति स्वाहा
उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहꣳविषम्। एताꣳस्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रा यमः सादनात्ते मिनोतु स्वाहा ॥ ३४ ॥
यथाऽहान्यनुपूर्वं भवान्त यथर्त्तव ऋतुभियन्ति क्लृप्ताः। यथा नः पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूँषि कल्पयैषां स्वाहा ॥ ३५ ॥
नहि ते अग्ने तनुवै क्रूरं चकार मर्त्यः।
कपिर्वभस्त तेजनं पुनर्जरायुर्गौरिव।
अप नः शोशुचदघमग्ने शुशुध्यारयिम्।
अप नः शोशु वदघं मृत्यवे स्वाहा ॥ ३६ ॥

यह कुल १२१ आहुतियां, चार व्यक्तियों द्वारा कुल ४८४ आहुतियां हुई। इस प्रकार आहुति देते देते शरीर भस्म प्रायः हो जाय, तब श्मशान घाट से लौटकर स्वजन वापिस घर को चलें। पहले स्त्रियां स्नान करके जिस घर में मृत्यु हुई हो, उसके यहां जावे फिर सब पुरुष सवस्त्र, प्रक्षालन स्नान करके घर जावे।

जिस घर में मृत्यु-सूतक हुआ हो, उसके घर की मार्जन लेपन, प्रक्षालनादि से शुद्धि करके गोमूत, गङ्गाजल सर्वत्र घर में एवं बाहर प्रांगण में छिड़कावे। पहले नीम के पत्ते चबावे फिर मौन होकर मृतक को श्रद्धांजलि देवे और उस के गुण दूसरों को सुनावे फिर गौ को ग्रास देवें। पहिले दिन घर का भोजन नहीं करे अर्थात् दूसरे के घर (सम्बन्धियों के घर से पहुंचाया गया) का पत्तल में करें, यदि उस दिन फलाहार किया जाय तो अति उत्तम है।

चतुर्थ सर्गः ॥

शान्तिकर्म, अस्थि संचय-अस्थि प्रवाह कर्म ।

जिस स्थान पर मृत्यु हुई थी उस स्थान को लीपकर उसी दिन शाम को तथा सुगंधादि चन्दन अगर तगर यज्ञ सामग्री, समिधा, घृत मिलाकर पवित्र स्थान पर वेदिका बनाकर हवनाहुति देवे, जिससे मृतक के रोग कीटाणु-वायु का शुद्धिकरण हो, सब का चित्त प्रसन्न हो । दूसरे दिन प्रातःकाल उसी प्रकार से स्वस्ति वाचन, शान्ति प्रकरण और ईश्वर-उपासना के मन्त्रों से यज्ञाहुति देवे, जहां मंत्र पूरा हो वहां "स्वाहा" शब्द का उच्चारण करके अग्नि में आहुति देवे ।

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद्-भद्रं तन्न आसुवः ॥ १ ॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २ ॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य

देवाः । यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ३ ॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इन्द्राजा जगतो बभूवः । य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ ॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः । यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ५ ॥

प्रजापते न त्वदतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं श्याम पतयो रयीणाम् ॥ ६ ॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा । यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्न ध्यैरयन्त ॥ ७ ॥

अग्नेनय सुपथा रये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ ८ ॥

अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव, सचस्वा नः स्वस्तये ॥ २ ॥

स्वस्तिये नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्य दितिर नर्वणः । स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावा पृथिवी सुचेतना ॥ ३ ॥

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः । बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आ-दित्या सो भवन्तु नः ॥ ४ ॥

विश्वेदेवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभव स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥ ५ ॥

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति ।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥ ६

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।

पुनर्ददताघ्नता जानता सङ्गमेमहि ॥ ७ ॥

ये देवानां यज्ञियां यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः । ते नो रासन्ता मुरु गायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ८ ॥

ॐ द्यौः शांतिरन्तरिक्षꣳशान्ति पृथ्वीशान्ति रापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्ति-र्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥ ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्ति ॥ ६ ॥

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे। अभयंपश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु अभयं मित्रादभयममित्रादभयंज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवाः नः सर्वा आशा ममः मित्रं भवन्तु ॥ ११ ॥

इस प्रकार संक्षिप्त आहुतियों से शान्तिकर्म समापन्न करे ।

जब चौथा दिन हो तब मृतक का कोई सन्निकट सम्बन्धी श्मशान में जाकर चिता से अस्थियों का पूजन करे, दूध, कुंकुम, चन्दन चर्चित करके अस्थिसंचय करे। यदि उस दिन पंचक या रवि, मंगल, शनिवार हो तो दूसरे, तीसरे या पांचवें दिन तक अस्थि संचय कर लेनी चाहिये। चिताग्नि लगाने के दिन से जब तक अस्थि संचय नहीं करे, तब तक नित्य मिट्टी के पात्र में दूध और जल भरकर शाम-सुबह चौराहा या श्मशान में रखता रहे।

अस्थि संचय करके घर आकर स्नान करे, शुद्ध होकर उसी दिन वापिस श्मशान भूमि में जाकर ऊनी या सूती पवित्र वस्त्र पहने हुए हाथ में पवित्री धारण करे और वामावर्त होकर तीन परिक्रमा करे और चितास्थान को दुग्ध से सिंचित करे फिर जल से सिंचित करे। अस्थि पात्र को अपने हृदय एवं मस्तक से लगाकर अस्थि सम्पुट की परिक्रमा करे और श्रीगंगाजी में आकर उनका विधिपूर्वक निक्षेप करे।

जिन पुरुष की अस्थियां दशदिन, दशमाह, तीन वर्ष के भीतर क्रमशः श्री गंगादि तीर्थ में आजाती हैं, वे मानव पुण्य के भागी होते हैं, पापों दोषों का अन्त होजाता है। जब तक मनुष्य की अस्थियां श्री गंगाजी में रहती हैं, उतने ही हजार वर्षों तक वह स्वर्ग में निवास करता है। अतः हरिद्वार

काशी, प्रयागादि पवित्र स्थान के धारा प्रवाह में अस्थि
अवश्य प्रवाहित करवा दें ।

बस बारह दिन तक गीता-रामायण यज्ञाहुति, वेदम
पाठ से शान्तिकर्म मात्र ही श्रेष्ठ आत्मशान्ति का प
उपाय है, अतिरिक्त अन्य लौकिक उपाय केवल दिखावा है

सन्त रामप्रकाशाचार्य "अच्युत" कृत

इति श्री अन्त्येष्टि संस्कार दर्पण सम्पूर्णम् ॥

उपसंहार

(साधु संस्कार विधि)

किसी विरक्त सन्त महात्मा पुरुष के निर्वाण (सा
वास) होने पर प्रस्तुत "अन्त्येष्टि संस्कार दर्पण" में ४.
विधि के अतिरिक्त नवीनता संस्कार पूर्ति विशेष के
निम्न प्रकार के नियम कहे गये हैं ।

१. साधु निर्वाण में दो प्रकार के घटक घटते हैं कि-

(अ) आश्रम के स्वाधिकारी (महंत) मण्डलेश्वर
निर्वाण ।

(ब) साधु मूर्ति के भण्डारी, सेवक विशेष।

इनमें से प्रतिष्ठित, विद्वान तपस्वी की वैकुण्ठी (रथी यात्रा) निकाली जाती है और साधारणतः सन्त को झोली-विशेष में भी शव-प्रयाण किया जा सकता है, परन्तु दोनों परिस्थितियों में शवासन में नहीं ले जाया जाता, किन्तु पद्मासन विशेष बैठक लगाकर ही पार्थिव शरीर यात्रा होती है।

२. जब भी किसी साधु का कहीं किसी स्थान में या घर, आश्रम, प्रभृत्य में देह-पात हो जाये तब उन्हें सर्व प्रथम आसन लगाकर ध्यानस्थ मुद्रा में बैठा दिये जांय ताकि शरीर उसी प्रकार स्थिर हो जाय।

३. आस-पास दूर-नजदीक जहां भी साधु भावुक, सत्संग प्रेमी परिचित सज्जन हों उन्हें अवश्य ही अंतिम दर्शन के लिये सूचना भिजवाने या बुलवाने का कार्य अवश्य किया जाय, इससे पुण्य वृद्धि होती हैं।

४. वैकुण्ठी (रथी) या झोली में पार्थिव साधु शरीर को बैठा कर चन्दन तिलक (सम्प्रदाय विशेष शैव-वैष्णव आदि) को लगाकर पुष्पमाल व वनमाल, नारियल, यज्ञ सामग्री भेंट रखकर साधक उपासकों को प्रणाम अन्तिम दर्शन करने चाहिये।

(क) रथी-यात्रा में चरणपादुका (खड़ाऊ) खप्पर (मट्टी

पात्र) मिष्ठान्न भरकर दक्षिण जानू के पास तथा जल पात्र (तूंबा, कमण्डल) दायें जानू के पास रखें । दायें हाथ में माला (सम्प्रदाय विशेष नियम से तुलसी चन्दन, रुद्राक्ष आदि की) रखें, बायें हाथ में गीता आदि पाठ्य पुस्तक रखें ।

(ख) शव के पार्थिव को स्नान कराने के बाद रथी यात्रा में बैठाने के पूर्व तेमद, लंगोटी, ब्राह्मगाती, गले में उपवस्त्र (तौलिया) रखावें । सम्प्रदाय विशेष झोली (भिक्षापात्र) भी कांख में रखवाना अति आवश्यक है ।

(ग) गृहस्थ शवयात्रा के समान रास्ते में पिण्डदान, विश्राम नहीं होता । शङ्ख से रास्ते में जल छिड़कते हुए साधु-समाज के साथ भजन, कीर्तन, नाम ध्वनि आदि मङ्गलगान करते श्मशान तक पहुंचे आगे का क्रिया निर्वाह पृष्ठोक्त विधि प्रकार से किया जावे । अंत्येष्टि संस्कार में यदि दाह कर्म हो तब तो वही विधि है और यदि समाधि-कर्म हो तब निम्न व्यवस्था होनी चाहिये ।

(घ) पांच फुट गहरा चौरस गढ़ा खोदे उसमें नीचे के तल पर पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख तीस इञ्ची ऊँचा एवं बीस इञ्ची अन्तरंग का आलय बनावे उसमें पू

प्रकार कही विधि संख्या ४ क, ख के समान बैठावे आस पास नीचे खूब अनुमानतः ४० किलो नमक बिछावे। गोदी में एक किलो मिश्री बिछाकर शीश पर एक मट्टी का कूण्डा खगोल (ब्रह्माण्ड) दर्शक देकर सामने शिला प्रभृत्य से दरवाजा अन्तिम दर्शन से बन्द करवादे तदनन्तर सभी अपने हाथ में मट्टी की मुठ्ठियां भरले तब घोर समाधी मंत्र पढा जाये। इस प्रकार मन्त्र पूरा होने पर मिट्टी समाधि में छोड़ी जाय, ऐसे तीन बार करने के बाद जन समुदाय उपस्थिति के हाथों मिट्टी से गढा भर दिया जाकर बाकी निकली मिट्टी को उसी स्थान पर दुबा बनाया जाये, उस पर जल छिड़क कर ऊपर गुलाल पुष्प छिड़काया जाये।

घोर समाधि मन्त्र—

यह मंत्र प्रायः सभी में प्रत्येक सम्प्रदाय विशेष का न २ होता है। बहुधा स्वामी दत्तात्रय, शिव, गोरख ा स्वामी रामानन्द प्रभृत्य आचार्यों के बनाये सर्व मंत्र ाणित माने जाते हैं। अग्नि संस्कार विधि पूर्वोक्त विधि ही होती है।

गृहस्थ धर्म में एकादशाह अथवा द्वादशाह कर्मसे सूतक पात दूर होता है। साधु-समाज में समाधि दाह संस्कार

से निवृत्ति पर स्नान मात्रसे सूतक निवृत्ति हो जाती है, अवान्तर उसी दिन के शाम या दूसरे दिन से ही प्रातः से सायं रात्री तक के लिये क्रमोत्तर गीता, रामायण, भजन, कीर्तन आदि विशेष सत्रहवीं उत्सव समाहृत कर्म किया जाना चाहिये और प्रातः या सायं समाधि-दाह स्थान पर दीपक अगरबत्ती रखा जाता है ।

६. सत्रहवीं रात्रि के दिन रात भर सतसंग विशेष निमन्त्रित साधुओं, आगन्तुक सतसङ्गी भक्तों की उपस्थिति में होता है, अट्टारहवें दिन प्रातः समाधिपूजन, गंगा जल प्रवर्षण, साधु घराने के नियमानुसार वरिष्ठ गुरुद्वार से आई चद्दर द्वारा गद्दीधर आश्रम पीठाधिकारी की नियुक्ति होने पर सम्प्रदाय-विशेष साधु-आश्रमों का भेंट, चद्दर, पूजा होकर विसर्जित हो जाता है ।

७. ऐसा कोई भी सत्रहवीं कर्म में प्रतिबन्ध नियम नहीं है कि कुछ लोक दिखावा आडम्बर किया ही जाये अपितु देश काल विभक्ति भेद से न्यूनतम पांच रुपये से लेकर पांच करोड़ रुपये के बीच चाहे कितना ही खर्चा कर सकते हैं, इसमें कोई ताने, सामाजिक बदले की भावना नहीं बरती जाती। सत्रहवीं सतसंग, सत्रहवीं भण्डारा, साधु मेला इन तीन प्रकार के नाम भेद से व्यय किया जाता है ।

८. आश्रमधारी महन्त के देह पात होने पर उनके गद्दीधर की नियुक्तिमें कुछ निर्णायक बातें तथ्यपूर्ण रखी जाती हैं, किन्तु साधु-सम्प्रदाय के लिये ऐसा कोई विधान पुस्तकाकार में पढने को उपलब्ध नहीं हुआ है—गद्दी पर बैठने का उत्तराधिकारी सर्व प्रथम विद्वान योग्य वरिष्ठतम विरक्त शिष्य को होता है, यदि ऐसा न हो तो छोटा, गुरुभ्राता गणमें से कोई भी हो सकता है, वह भी अभाव में हो तो मृतक के छोटे या बड़े गुरु भ्राता का शिष्य अर्थात् भतीज-शिष्य उनकी गद्दी का स्वाधिकारी बन सकता है, सर्वथा अभाव में उसी सम्प्रदाय के गुरु घराने से सम्पर्क योग्य साधु को उपस्थित साधु मण्डली की सम्मति से नियुक्ति मिलती है।

(क) जिस दिन दिवंगत आश्रम अधिपति का साकेत-वास होता है, उसी समय मुख्य ध्वज झुकाया (उतारा) जाता है तथा नव नियुक्ति गद्दीधर को चद्दर ओढाने के समय नवीन ध्वजारोहण आश्रम पर करवाया किया जाता है।

(ख) किसी भी सन्त के निर्वाण-सत्रहवीं पर उनके पूर्वज गुरुद्वारों में चद्दर भेंट तथा निम्न स्तर विरक्त साधु गणको प्रसादी का प्रसाद एवं आगन्तुक महात्माओं की यातायात किरायाभेंट दिया दिलवाया जाताहै।

राग पद गजल ताल कव्वाली या गजल जिला झंझोटी।

इतना तो करना गुरुवर, मेरा नर तन सुधरे।
पाकर अद्वैत निष्ठा, मेरा नर तन सुधरे ॥टेर॥

उरदृढ़ अपरोक्ष हो ज्ञाना, सब संशय दोष विलाना।
सब भ्रांति मिटे अज्ञाना, मेरा नर तन सुधरे ॥१॥

संचित दग्ध हो जबही, प्रारब्ध पुरे तबही।
हो क्रियमाण वितरण सबही, मेरा नरतन० ॥२॥

जड़शक्ति तमोकी माया, क्रिया रजो विलमाया।
सतो ज्ञान शक्ति समाया, मेरा नरतन सुधरे ॥३॥

तन्मात्रा भूत स्थूला, कारण अविद्या तूला।
हो सूक्ष्म शांति मूला, मेरा नरतन सुधरे ॥ ४ ॥

भूत इन्द्रिय युग प्राना, वासना कर्म काम जाना।
अंतःकरण पुरो अष्ट हाना, मेरा नरतन० ॥५॥

शुध बुध निश्चल होई, व्याकुलता सबही खोई।
शुद्ध भाव शांत सोई, मेरा नरतन सुधरे ॥ ६ ॥

मुख हरिनाम तुलसीदल हो,
मनभावित सत्संग थल हो।

स्वर्ण मिश्रित चरणामृत जल हो,
मेरा नर तन सुधरे ॥७॥
होवे जब देह बिछोही, होवे ना क्लेश विमोही ।
संत रामप्रकाश लय वोही, पूरा नरतन सुधरे ॥८॥

राग गजल ताल कव्वाली ।

इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तनसे निकले ।
गोविन्द नाम लेकर, फिर प्राण तनसे निकले ॥टेर॥
श्री गंगाजीका तट हो, या यमुनाजीका वट हो ।
मेरा सांवरा निकटहो, तब प्राण तनसे निकले ॥१॥
श्रीवृन्दावनका थल हो, मेरे मुखमें तुलसीदल हो ।
विष्णुचरणका जल हो, तब प्राण तनसे निकले ॥२
मेरा सांवरा दिव्य खड़ा हो, बंशीका स्वर भराहो ।
तिरछा वो चरण धराहो, तबप्राण तनसे निकले ॥३
सिर सोहना मुकुट हो, मुखड़े ते काली लट हो ।
यही ध्यान मेरे घट हो, तब प्राण तनसे निकले ॥४
हो केसर तिलक आला, मुख चन्द्र दोऊ उजाला ।
मैं डालूं गले में माला, तब प्राण तनसे निकले ॥५

कानोंमें जड़ाऊ बाली, लटके लटें हो काली ।
मैं देखूं छटा निराली, तब प्राणतनसे निकले ॥६

तन पीताम्बर कसी हो, होठों पे मधुर हँसी हो ।
छवि यही मो मन बसीहो, तबप्राण तनसे निकले॥

पचरङ्ग तन काछनी हो, पटपीत से ही तनी हो ।
मेरी बात सब ही बनी हो, तब प्राण तनसे० ॥८॥

जब कण्ठ प्राण आवे, कोई रोग ना सतावे ।
यम दरस ना दिखावे, तब प्राण तनसे निकले॥९॥

मेरे प्राण निकले सुखसे, तेरा नाम आवे मुखसे।
बच जाऊँ घोर दुःखसे, तबप्राण तनसे निकले॥१०

उस वक्त जल्दी आना, मुझको न भूल जाना ।
नूपुर की ध्वनि सुनाना, तब प्राण तनसे० ॥११॥

सुधि होवे नहीं तनकी, तैयारी होय गमन की।
लकड़ी हो वृन्दावन की, तब प्राण तनसे० ॥१२॥

यह नेकसी अरज है, मानो तो क्या हरज है ।
यही इक दासकी गरज है, तब प्राण तनसे० ॥१३

❊ भजन ❊

कभी भूले से दर्शन आपका सरकार हो जाता ।
मैं चरणोंसे लिपट जाता गलेका हार हो जाता ॥

अगर मेरे हृदय में प्रेम का संचार हो जाता ।
मेरा जीवन सफल होता मेरा उद्धार हो जाता ।

न पूछो मेरी अभिलाषा मगर इतना समझता हूँ ।
तुम्हारी एक ठोकर से मैं भँवर से पार होजाता ॥

नसीबों में लिखा होता मुकद्दर में बंधा होता ।
तो हमको भी कभी यदुनाथका दीदार हो जाता ॥

तसल्ली मुझको दे जाते जो इच्छा थी वही करते ।
मगर मेरे लिये एक मशहरा हल हो जाता ॥

[illegible] हो व्यर्थ नयनोंमें उतर कर दिलमें आजाओ ।
तुम्हारा परदा रह जाता हमें दीदार हो जाता ॥

खड़ा है दर पै बेकल दीन याचक हाथ फैलाये ।
उसे भक्तोंका सदका कुछ तो ऐ सरकार हो जाता ॥

रघुपति राघव राजाराम । पतित पावन सीताराम

* भजन *

जब तेरी डोली निकाली जायगी ।
बिन मुहूर्त के उठाली जायगी ॥

इन हकीमों से कहो यह बोलकर ।
करते थे दावा किताबें खोलकर ॥
यह दवा बिलकुल न खाली जायगी ॥ जब०

क्यों गुलों पर हो रहो बुलबुल निसार ।
पीछे है माली खड़ा वह खबरदार ॥
मार कर गोली गिराली जायगी ॥जब०

धन सिकन्दर का यहां सब रह गया ।
मरते दम लुकमान भी यों कह गया ॥
यह घड़ी हरगिज न टाली जायगी ॥जब०

जब तेरा परलोक में होगा हिसाब ।
कैसे मुकरोगे वहां पर तुम जनाब ॥
जब बही तेरी निकाली जायगी ॥जब०

ऐ मुसाफिर ! क्यों पसरता है यहाँ
यह किराये पर मिला तुझको मकां ॥
कोठरी खाली कराली जायगी ॥जब०

बम्बई वाले—पं० श्रीधर शिवलालजी ज्ञानसागर प्रेस, किशनगढ़

Scanned with CamScanner